8 शिक्षण की विधियाँ (Teaching Methods)

शिक्षण पद्धतियाँ या विधियाँ (Teaching Methods)—शिक्षण एक सक्रिय क्रिया है, जिसका मुख्य उद्देश्य छात्रों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाना है। इस क्रिया में शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों ही क्रियाशील रहते हैं। प्रत्येक शिक्षण में शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों सक्रियता से भाग लेते हैं। शिक्षक का दायित्व होता है कि वह शिक्षार्थियों की सक्रियता के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करे।

कक्षा में शिक्षण के आयोजन में शिक्षक और उसका व्यक्तित्व एक महत्वपूर्ण कारक होता है। शिक्षक अपनी कुशलता से कक्षा में शिक्षण के लिए जो वातावरण निर्मित करता है, उसमें दो तत्व मुख्य रूप से भूमिका निभाते हैं—**प्रथम** तो शिक्षक जो ज्ञान बालकों को देना चाहता है, उसकी विषयवस्तु पर उसका अधिकार हो, **दूसरा** इस ज्ञान को बालकों तक पहुँचाने के लिए वह किस पद्धति का प्रयोग करता है। शिक्षण के आयोजन का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य होता है—शिक्षण की प्रभावशीलता और यह प्रभावशीलता विषयवस्तु और बालक की ग्राह्यता की दृष्टि से उपयुक्त पद्धति को अपनाकर की जा सकती है।

जब शिक्षण कार्य का आयोजन किसी निश्चित और व्यापक स्वरूप के अनुसार आयोजित किया जाता है तो इस निश्चित स्वरूप को पद्धति और विधि की संज्ञा दी जाती है। वास्तव में, उपयुक्त पद्धति का अनुसरण कर शिक्षक अपने शिक्षण को वांछित दिशा एवं आवश्यक गति प्रदान करता है।

किसी भी पद्धति का चुनाव करते समय शिक्षक को पहले यह सोच लेना चाहिए कि वह जिस पद्धति का अनुसरण कर रहा है, उससे उसके उद्देश्यों की उपलब्धि किस सीमा तक हो रही है ?

शिक्षण विधियों का विकास (Development of Teaching Methods)—यदि हम ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखें तो हम पाते हैं कि वर्तमान शिक्षण पद्धतियों का जन्म तथा विकास महान् दार्शनिक रूसो के प्रयासों का प्रतिफल है। रूसो के विचारों ने ही नवीन शिक्षण पद्धतियों के विकसित होने का रास्ता साफ किया है। रूसो की ही विचारधाराओं से प्रभावित होकर पेस्टालॉजी ने इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया। पेस्टालॉजी का प्रमुख ध्येय शिक्षण को मनोविज्ञान बनाना था। इसके साथ ही साथ वह शिक्षण पद्धतियों को यन्त्रवत् बनाना चाहता था। पेस्टालॉजी की कुछ विचारधाराएँ कुछ सीमा तक अव्यावहारिक एवं अप्रयोगात्मक थीं, फिर भी पेस्टालॉजी का प्रभाव आवश्यकता से कहीं अधिक था। पेस्टालॉजी की विचारधाराओं ने 19वीं सदी के प्रारम्भ में संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रवेश किया।

20वीं सदी के प्रारम्भ में एक नई विचारधारा का जन्म होने लगा। पेस्टालॉजी के उपरान्त उनके शिष्यों फ्रोबेल तथा हरबर्ट ने उसकी विचारधारा को आगे बढ़ाया और शिक्षणशास्त्र में मनोविज्ञान के

प्रयोग पर बल दिया। फ्रोबेल ने किण्डरगार्टन पद्धति को और हरबर्ट ने अनुदेशन विधि को जन्म दिया। हरबर्ट ने अपनी विधि में चार पदों स्पष्टत सम्बन्ध, व्यवस्था तथा विधि को स्थान दिया। उसके शिष्य जिलर ने स्पष्टता नामक पद को दो भागों में विभाजित किया—(1) प्रस्तावना, (2) प्रस्तुतीकरण।

ये पाँचों पद हरबर्ट की पंचपद प्रणाली के नाम से प्रसिद्ध हैं। मैडम मेरिया मॉण्टेसरी ने शिक्षण के स्थान पर सीखने अर्थात् अधिगम पर बल दिया। उसने स्व-शिक्षा द्वारा सीखने पर बल दिया। फ्रोबेल ने खेल द्वारा सीखने को अपनी पद्धति का आधार बनाया। आधुनिक युग में जॉन ड्यूवी ने अनुभव द्वारा सीखने के सिद्धान्त को शिक्षण पद्धति का आधार बनाया।

पद्धति या विधि का अर्थ (Meaning of Method)—शिक्षा में विधि या पद्धति से तात्पर्य शिक्षक द्वारा निर्देशित ऐसी क्रियाओं से है जिनके परिणामस्वरूप छात्र कुछ सीखते हैं। इस प्रकार पद्धति अनेक क्रियाओं का पुंज है। विधि एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके परिणामस्वरूप छात्र कुछ ज्ञानार्जन करता है। पद्धति की प्रक्रिया होने के कारण इसमें कई सोपान होते हैं। इनमें से अनेक सोपान होते हैं, जो पद्धतियों में पाये जाते हैं। इन सोपानों को ठीक प्रकार से व्यवस्थित करना शिक्षण का कार्य होता है।

शिक्षण विधियों का महत्व (Importance of Teachng Methods)—शिक्षण विधियों के महत्व को निम्नांकित शीर्षकों पर स्पष्ट किया जा सकता है—

1. मानसिक तथा शारीरिक श्रम का समन्वय—एक श्रेष्ठ पाठन-पद्धति बालक को केवल मानसिक श्रम करने के लिए ही उत्साहित नहीं करती वरन् वह शारीरिक श्रम के लिए भी उत्साहित करती है। इस प्रकार उसमें शारीरिक और मानसिक श्रम का समन्वय किया जाता है।

2. प्रेरणादायक होना—शिक्षक जितना प्रेरणादायक होगा उतना ही वह सफल माना जायेगा। अतः अच्छी पाठन पद्धति छात्रों को सीखने की प्रेरणा देती है।

3. पूर्व ज्ञान पर आधारित—जो पद्धति छात्रों के पूर्व ज्ञान के आधार पर रहती है उसमें शिक्षक को सफलता निश्चित रूप से मिलती है क्योंकि पूर्व ज्ञान के आधार पर छात्र नवीन ज्ञान को आसानी से प्राप्त कर लेते हैं।

4. सुव्यवस्थित होना—पाठन पद्धति सुव्यवस्थित होनी चाहिए। सुव्यवस्थित पाठन पद्धति शिक्षक को सफलता की ओर ले जाने वाली होती है। सुव्यवस्थित होने पर शिक्षक आत्मविश्वास तथा बिना शंका के अध्यापन का कार्य करता है।

5. उपचारपूर्ण होना—अच्छी पाठन पद्धति में बालकों की भूलों का सावधानी से उपचार किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययन में बालकों द्वारा भूल करने पर उन्हें मारा-पीटा नहीं जाता है। बल्कि उनका सहानुभूतिपूर्वक उपचार किया जाता है।

6. बाल मनोविज्ञान के अनुकूल—अच्छी पाठन पद्धति बाल मनोविज्ञान के अनुकूल होती है। इसमें शिक्षक समस्त बालकों को एक ही प्रकार के मार्ग पर न ले जाकर उनकी शारीरिक, मानसिक तथा व्यक्तिगत भिन्नताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान करता है। अतः शिक्षक के लिए यह अति आवश्यक है कि वह बालकों के स्वभाव तथा मनोविज्ञान के पक्ष को भली-भाँति समझें।

7. शैक्षिक सिद्धान्तों के अनुकूल—सर्वोत्तम पाठन पद्धति की अन्य विशेषता उसका शिक्षा सिद्धान्तों के नियमों के अनुकूल होना है। शिक्षक अध्यापन के प्रमुख सूत्रों को व्यवस्थित ढंग से प्रयोग में लाना है। इन सूत्रों के उचित प्रयोग से पाठन पद्धति प्रभावशाली हो जाती है तथा छात्र अध्ययन में रुचि लेने लगते हैं।

8. क्रियाशीलता के अवसर—एक प्रभावशाली पाठन पद्धति में बालकों को क्रियाशीलता के पर्याप्त अवसर प्रदान किये जाते हैं। बालक को इतनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है कि वह क्रियाशील

होकर ज्ञानार्जन करने लगे। शिक्षण में निष्क्रियता नीरसता लाती है और बालक रुचि के साथ नवीन ज्ञान ग्रहण नहीं करता है।

9. मानसिक तथा शारीरिक श्रम में समन्वय—एक श्रेष्ठ पाठन पद्धति बालक को केवल मानसिक श्रम करने के लिए उत्साहित नहीं करती है वरन् वह श्रम के लिए भी उत्साहित करती है। इस प्रकार उसमें शारीरिक और मानसिक श्रम का समन्वय किया जाता है।

10. पथ-प्रदर्शन की योग्यता का होना—अच्छी पाठन पद्धति वह है जिसमें बालक का ठीक पथ-प्रदर्शन किया जाता है। यह पथ-प्रदर्शन शिक्षक इस ढंग से करता है कि बालक सरलता से ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

अच्छी शिक्षण विधि की विशेषताएँ (Characteristics of Good Teaching Method)—एक अच्छी शिक्षण विधि की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित होती हैं—

1. वह पद्धति अच्छी होती है, जो बालकों में सीखने के लिए प्रेरणा जाग्रत करती है।
2. एक उत्तम पद्धति में स्पष्टता एवं निश्चितता होती है।
3. एक अच्छी पद्धति शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने की चेष्टा करती है।
4. एक उत्तम पद्धति स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल होती है।
5. एक अच्छी पद्धति सीखने की प्रकृति तथा शिक्षा दर्शन से सम्बन्धित होती है।
6. एक अच्छी पद्धति छात्रों के सम्पूर्ण व्यक्तिगतता का विकास करती है।

(1) कहानी विधि (STORY TELLING)

प्रस्तावना—समष्टि रूप से भावना तथा चिन्तन का संयोजन कल्पना एवं सत्य का संश्लेषण और इन दोनों तत्वों से सम्मिश्रित तथा सुसम्बन्धित चेतना का नाम ही मानव जीवन है। जहाँ यह मानव जीवन है वहाँ उसकी कहानी भी अवश्य है। अतः कहानी कहने की परम्परा उतनी ही पुरातन है जितना पुराना हमारा जीवन है। जीवन में ऐसे अनेक क्षण और ऐसी घटनाएँ आती हैं जो थोड़े समय के लिए आकर भी हमें चमत्कृत कर जाती हैं। कहानी उन क्षणों और घटनाओं की विवरणात्मक यादगार है। मानव केवल अनुभावक ही नहीं, प्रकाशक भी है। उसके हार्दिक, तीव्र एवं व्यापक रागात्मक भाव जन, जग और जीवन में संयोजित क्रियाकलापों के प्रकटीकरण के लिए तड़फा करते हैं अतः परोपेक्षित प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति-व्याकुलता ही कथा साहित्य की सृजन सूचना है। कहानी हमारे जीवन का प्रतिबिम्ब है, कौतूहल है।

प्रेमचन्द ने लिखा है—"कहानी एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा-विन्यास सभी उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं।.....वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल, बेल-बूटे सजे हुए हैं, बल्कि वह एक ऐसा गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"

कहानी शिक्षण के उद्देश्य

(1) उपनिषदों तथा पुराणों की कहानियाँ।

(2) पंचतन्त्र तथा हितोपदेश काल की कहानियाँ।

(3) जातक कथाएँ।

(4) प्राकृत भाषा की कहानियाँ।

(5) ब्रजभाषा की कहानियाँ।

(6) आधुनिक कहानियाँ।

कहानी पढ़ाने अथवा सुनने के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

(1) स्वस्थ मनोविनोद और मनोरंजन की शिक्षा देना।

(2) बालकों को स्पष्ट एवं तर्कसंगत ढंग से विचार करना सिखाना।

(3) उन्हें अपनी कल्पनाशक्ति के प्रयोग के अवसर प्रदान करना।

(4) उनके संवेगों को प्रशिक्षित करना।

(5) उनके सम्मुख व्यक्तिगत एवं सामाजिक व्यवहार के आदर्श उपस्थित करना।

(6) उनकी भाषा एवं शैली विषयक रुचि का परिष्कार करना।

(7) उनके हृदयगत भावों को क्रमबद्ध, तर्कपूर्ण, सुशृंखलित एवं स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करने के साधन प्रस्तुत करना।

कहानी कथन तथा कक्षा–वर्तमान काल में मनोविज्ञान की नवीन खोजों ने शिक्षा क्षेत्र में महान् परिवर्तन ला दिया है। अब शिक्षक नहीं, विद्यार्थी शिक्षा का केन्द्र बिन्दु है। बालक को जो भी ज्ञान दिया जाए वह इतने सुरुचिपूर्ण, सरल एवं स्वाभाविक ढंग से दिया जाए कि बालक उसे पाने के लिए प्रयत्नशील हो उठे। अतः बालक को पाठ में रुचि बनाए रखने तथा सुगमता से ज्ञान को हृदयंगम कराने हेतु कथा प्रणाली का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि कहानी कहने और सुनने की प्रवृत्ति बालकों में आदिकाल से ही होती है। अध्यापक को कहानी कथन के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि कहानी कथन के उद्देश्यों से वह दूर न जा पड़े। कहानी का मुख्य उद्देश्य बोलने की आदत डालना है तथा विचारों की क्रमबद्ध शक्ति बढ़ाना है। कहानी का विषय और उसकी भाषा कक्षा के अनुसार सरल होनी चाहिए जो ज्ञान दिया जाए वह परोक्ष रूप में ही हो, क्योंकि कहानी स्वयं रोचक ढंग से स्व-कर्तव्य निवृत कर देने का प्रधान साधन है।

कहानी शिक्षण विधि–कहानी का निर्वाचन करके कहानी को इस प्रकार बालकों के सम्मुख उपस्थित करना चाहिए जिससे वे अधिक से अधिक बात ग्रहण कर सकें। अधिक ग्रहण मौखिक कहानी कथन द्वारा ही सम्भव है क्योंकि पढ़कर सुनाने से कहानी में नीरसता आ जाती है। रुचि न रहने पर छात्रों का ध्यान एकाग्र नहीं रहता। शिक्षक के व्यक्तित्व तथा भावों का कोई भी प्रभाव उन पर नहीं पड़ पाता तथा गुरु-शिष्य में निकटत्व की भावना भी उत्पन्न नहीं हो पाती। उसके विपरीत छात्रों का अवधान सुनाई हुई कहानी की ओर एकाग्र रहता है। सुनाते समय अध्यापक की कहानी उसकी अपनी बात हो जाती है। उसमें उसका व्यक्तित्व समा जाता है। इससे विद्यालय में भी घरेलू वातावरण सजग हो उठता है। अतः पुस्तक की कहानी को शब्दशः ग्रहण कर अपने शब्दों में कहना अधिक प्रभावोत्पादन होता है।

कहानी सुनाने की सफलता तभी है, जब बच्चे कहानी सुनते ही सक्रिय हो उठें। उनके हृदय में कहानी में बताई हुई बातों को क्रियात्मक रूप में परिणत करने की लालसा जाग उठे।

कहानी सुनाने वाले का स्वयं उस कहानी में रुचि रखना आवश्यक है, तभी वह बालकों में रुचि उत्पन्न कर सकता है। कहानी सुनाने वाले की सफलता तभी कही जा सकती है जब वह कहानी सुनाने में अपने को भूल जाए, तन्मय हो जाए। कहानी सुनाते समय शिक्षक की दृष्टि के सामने दृश्यों का स्मृति चित्र रहना चाहिए, जिन्हें वह स्वाभाविक गति से सुना सकें। उसकी गति न बहुत तीव्र हो और न बहुत मन्द।

कहानी सुनाते समय आलंकारिक भाषा का प्रयोग विद्यार्थियों की रुचि में बड़ा व्यवधान उपस्थित करता है, अतः कहानीकार की भाषा धारावाहिक, मुहावरेदार और बोधगम्य होनी चाहिए। साथ ही शिक्षक स्वयं विनोदप्रिय हो जिससे विनोदात्मक तथा व्यंग्यात्मक भाषा से कहानी में सरलता आ जाए परन्तु वह व्यंग्य किसी को दुःखी अथवा अपमानित करने वाला न हो।

कहानी कहना एक अति प्राचीन कला है जिसके द्वारा किसी विषय या घटना को मनोरंजन बनाकर छात्रों को उसका ज्ञान सरलता और सफलता से प्रदान किया जाता है। इसका उद्देश्य है—छात्रों में पाठ्य विषय के प्रति रुचि और उत्साह को जाग्रत करना। इसलिए कहानी कहने को औपचारिक शिक्षा (Formal Education) का महत्वपूर्ण साधन माना जाता है और प्रत्येक शिक्षक को उससे पूर्णरूप से अवगत होने का परामर्श दिया है। **ग्रीन व बरचेना** का कथन है—"किसी कहानी को अच्छी प्रकार कहने की योग्यता को शिक्षक का उचित रूप से आवश्यक गुण माना जा सकता है।"

"The power to tell a story well might not unfittingly be regarded as an essential qualification of a teacher."
—**Green and Birchenough**

सावधानियाँ (Precautions in Story Telling)—कहानी प्रणाली के प्रयोग के सम्बन्ध में **रायबर्न** (Ryburn) ने निम्नलिखित सावधानियों का उल्लेख किया है—

(1) कहानी पढ़ी नहीं जानी चाहिए वरन् कही जानी चाहिए। यदि कहानी पढ़ी जाती है तो उसकी अधिकांश रोचकता नष्ट हो जाती है।

(2) कहानी कहते समय शिक्षक को उसे पुस्तक आदि में देखने के लिए नहीं रुकना चाहिए क्योंकि इससे धाराप्रवाहिता और मनोरंजन का क्षय होता है।

(3) शिक्षक जिस कहानी को कहना चाहता है उसे वह आद्योपान्त याद होनी चाहिए।

(4) शिक्षक को कहानी का विवरण उसमें आई हुई घटनाओं के क्रम में देना चाहिए।

(5) छोटे बालकों की कहानियों के मुख्य वाक्यों और वार्तालापों को बार-बार दोहराना चाहिए, क्योंकि बालकों को इसमें आनन्द आता है।

(6) छोटे बालकों की कहानियों में अधिकाधिक क्रियाओं का समावेश होना चाहिए क्योंकि उनको क्रियाओं में आनन्द आता है, विवरण में नहीं।

(7) छोटे बालकों की प्रारम्भिक कहानियाँ उन विषयों के बारे में होनी चाहिए जिनका उन्हें अनुभव हो।

(8) कहानी सरल शब्दों में और स्पष्ट रूप से कही जानी चाहिए। ऐसा न होने से कहानी प्रभावहीन हो जाती है।

(9) कहानी बिल्कुल स्वाभाविक ढंग से कही जानी चाहिए, पर आवश्यकता के अनुसार हाव-भाव और अभिनय अवश्य किया जाना चाहिए।

(10) कहानी कहते समय शिक्षक के सामने उसका मानसिक चित्र उपस्थित रहना चाहिए तभी उसकी कहानी क्रमबद्ध और मनोरंजक हो सकती है।

(11) कहानी बालकों के ज्ञान एवं मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए। 10 वर्ष के बालकों को 5 वर्ष के बालकों के लिए उपयुक्त कहानी सुनाना केवल समय को नष्ट करना है।

(12) यदि कहानी में ऐतिहासिक तथ्य नहीं है तो छात्रों की आयु को ध्यान में रखकर उसे छोटा या बड़ा कर देना चाहिए।

(13) कहानी कहते समय शिक्षक को इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वह किन उद्देश्यों से कहानी कह रहा है। उद्देश्यहीन कहानी निरर्थक होती है।

(14) कहानी कहते समय हास्य की अवहेलना नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे बालकों को सजग रखने में सहायता मिलती है।

(15) सभी आयु के बालकों को केवल वे ही कहानियाँ सुनानी चाहिए, जो उनको कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करें।